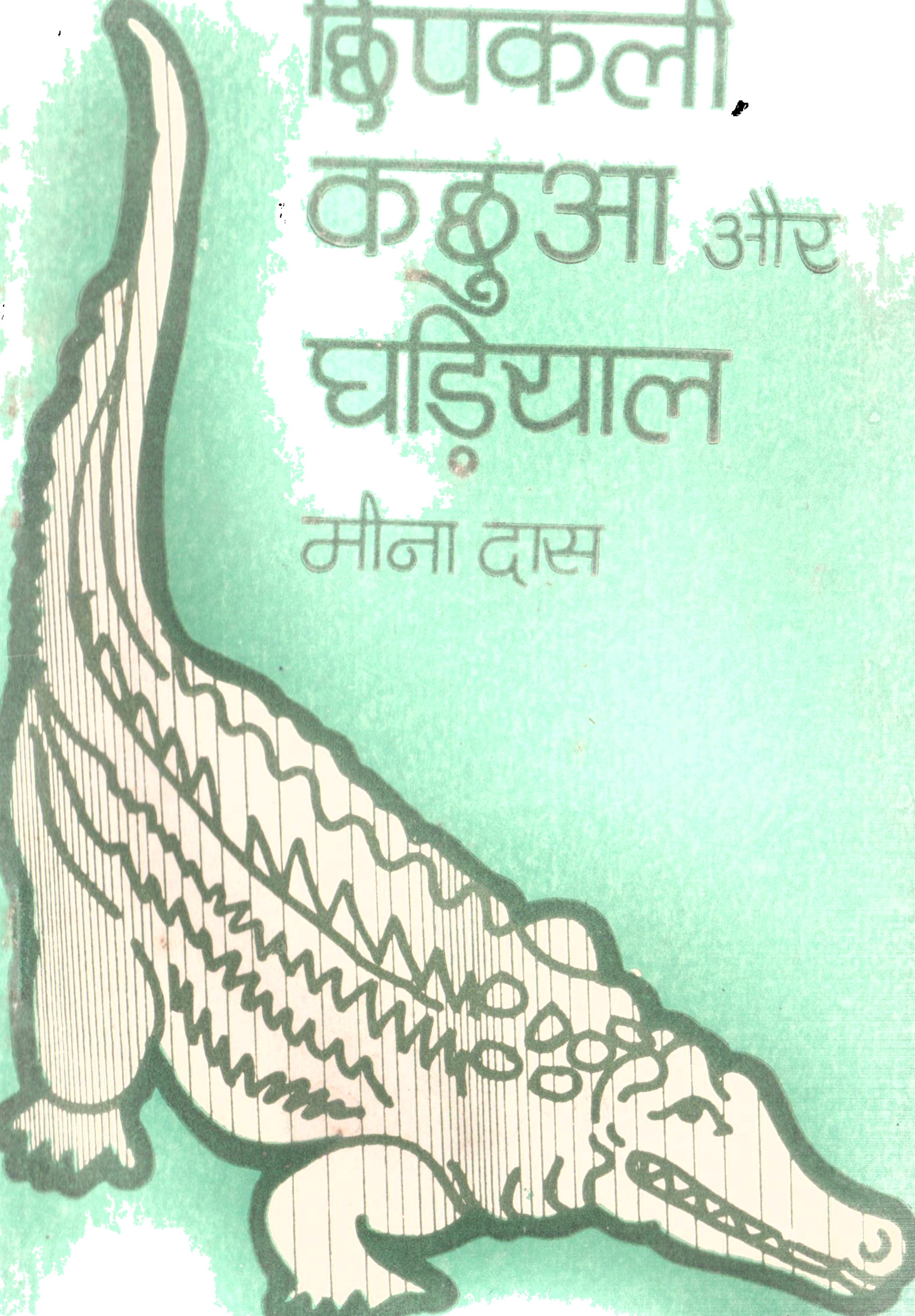
छिपकली, कछुआ और घड़ियाल

मीना दास



छिपकली • कछुए

और

घड़ियाल

लेखिका

मीना दास

प्रकाशक

मधु प्रकाशन

42, ताशकन्द मार्ग, इलाहाबाद-211001

प्रकाशक :
मधु प्रकाशन
42, ताशकन्द मार्ग, इलाहाबाद 211001

मूल्य : सजिल्द रु० 20/-
पेपर बैक रु० 12/-

प्रथम संस्करण
1984

मुद्रक :
अशोक मुद्रण गृह
42, ताशकन्द मार्ग, इलाहाबाद-211001

प्रस्तावना

आपको जानकर यह आश्चर्य होगा कि रोजआना घरों, बागों या चिड़ियाघरों में दिखने वाली छिपकलियाँ, कछुएँ तथा घड़ियाल, विशाल सर्प परिवार के ही सदस्य हैं। इस वंश के सर्पों की प्रायः 1892 विभिन्न जातियों का अब तक पता चला है।

इस परिवार में छिपकलियाँ, कछुएँ और घड़ियाल तरह-तरह के रंगों और आकार के मिलती हैं। कुछ छिपकलियाँ तो 23 फुट तक लम्बी भी होती हैं। कुछ मोटी और छोटी तथा कुछ पतली होती हैं। छिपकलियों का शरीर पतले-पतले खालों से ढका रहता है। इनकी जीभ भी अलग-अलग लम्बाई की होती है। कुछ छिपकलियाँ पूँछ फटकार कर शत्रु को मारती हैं। कुछ की पूँछ काँटेदार भी होती है।

कछुएँ और घड़ियालों की भी कई जातियाँ होती हैं। कुछ कछुएं इतने बड़े होते हैं कि वे एक बड़े चट्टान की तरह दिखाई देते हैं। घड़ियाल तो तुमने बहुत देखे होंगे। ये बड़े भयंकर होते हैं। इनकी खाल पर गोली का असर बड़ी मुश्किल से होता है।

आज हम छिपकलियों, कछुएँ और घड़ियालों के विषय में बड़ी ही दिलचस्प और रोमांचक बातें बताने जा रहे हैं।

आशा है जिनके लिए यह लिखी गई है उनमें पुस्तक का स्वागत होगा।

—मीना दास

विषय-सूची

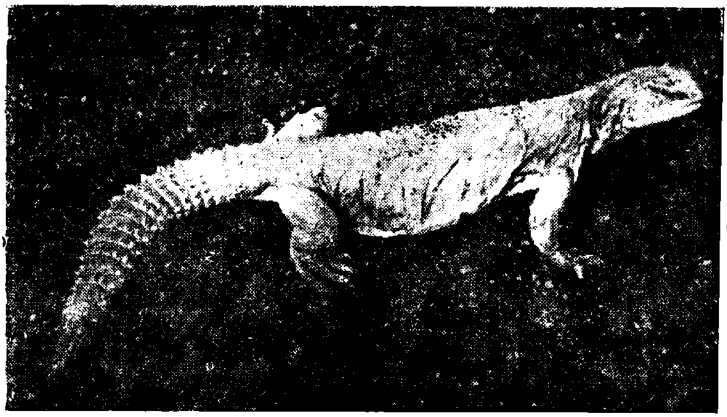
छिपकली परिवार

प्राचीन सर्पों के अनेक वंशज आज भी जीवित हैं। ये सर्प स्थल पर, जल में और पृथ्वी के भीतर रहने वाली तीन मुख्य श्रेणियों में बाँटे जा सकते हैं। पृथ्वीतल पर रहने वाले सर्पों में छिपकलियों का स्थान सबसे पहला है। इस वंश के सर्पों की प्राय: 1900 विभिन्न जातियों का वैज्ञानिकों ने अब तक पता लगाया है।

छिपकलियाँ विभिन्न आकार की होती हैं। कुछ तो बहुत छोटी होती हैं और कुछ 23 फुट तक लम्बी होती हैं। अधिकांश छिपकलियों के शरीर पतली-पतली खालों से ढके रहते हैं, जो खुरदरी और नुकीली होती हैं। कुछ छिपकलियों की खाल चिकनी होती हैं। किसी-किसी छिपकली के शरीर पर खाल होती ही नहीं।

लगभग सभी छिपकलियों के चार पैर होते हैं, परन्तु कुछ के केवल दो ही होते हैं। कुछ ऐसी छिपकलियाँ भी हैं, जिनके पैर होते ही नहीं। इनके पंजों में बहुत तेज नाखून होते हैं। कुछ छिपकलियाँ ऐसी बनी होती हैं जिनकी उँगलियों के चारों ओर खालों की पंक्ति सी बनी होती है। इसी की सहायता से वे आसानी से रेतीले स्थानों में चल-फिर सकती हैं। यह विशेषता रेगिस्तानो छिपकलियों में ही पायी जाती है।

छिपकलियों की जीभ अनेक प्रकार की होती है। कुछ की मोटी और चौड़ी होती है, परन्तु अधिकांश की लम्बी, पतली और साँप की जीभ की भाँति आगे की ओर दो भागों में विभाजित होती है। कुछ छिपकलियों की जीभ की नोक में एक प्रकार का चिपचिपा रस होता है, जो शिकार को पकड़ने में बहुत सहायता देता है।



चित्र 1—काँटेदार पूछ वाली छिपकली

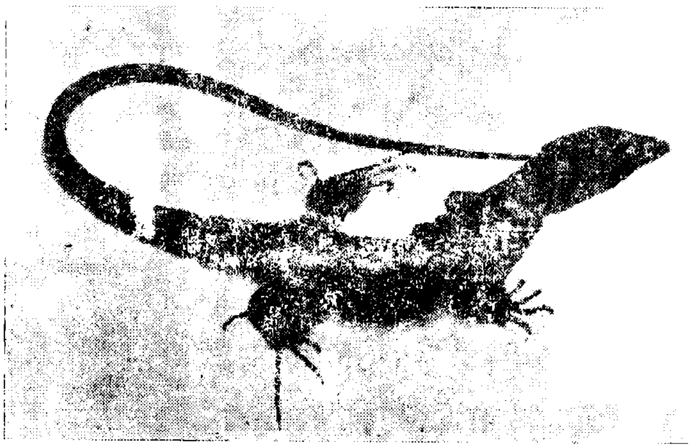
छिपकली की पूँछ सामान्यतया छोटी और मोटी होती है, परन्तु कुछ छिपकलियों की पूँछ लम्बी और पतली भी होती है। किसी-किसी जाति की छिपकली की पूँछ तो उसके शरीर और सिर की लम्बाई से दुगनी या तिगुनी तक होती है। बड़ी छिपकलियाँ अपनी पूँछ फटकारकर बड़े जोर से अपने शत्रु को मारती हैं। जिन छिपकलियों की पूँछ काँटेदार होती है वे अपने शत्रु के शरीर में उसे चुभोकर उसके घाव में से मांस निकाल लेती हैं।

परन्तु कुछ ऐसी छिपकलियां भी हैं, जो अपनी पूँछ को, शत्रु का आक्रमण होने पर, शरीर से अलग कर देती हैं। यह पूँछ कट जाने पर भी कुछ देर तक हिलती-डुलती रहती है। उचकती हुई पूंछ को छिपकली का शत्रु पकड़ लेता है और इसी बीच वह भाग कर अपनी जान बचा लेती है। कुछ महीनों के बाद फिर नयी पूँछ निकल आती है। परन्तु यह नयी पूँछ पहले वाली पूँछ की अपेक्षा छोटी होती है और उसके ऊपर की खाल टेढ़ी-मेढ़ी बनी होती है।

छिपकलियाँ अत्यन्त फुर्तीली होती हैं। कुछ तो इतनी तेज दौड़ती हैं कि दिखाई भी नहीं देती हैं। अपने शरीर के अगले भाग को उठाकर छिपकलियाँ पिछले पैरों के बल पूँछ की सहायता से बड़ी तेजी से दौड़ती हैं। आपको सुनकर आश्चर्य होगा कि कई छिपकलियाँ उड़ती भी हैं। इनके शरीर की खाल दोनों ओर बाहर निकली हुई होती है। यह खाल हवाई जहाज के पंखों की भाँति फैलायी जा सकती है और छिपकली वृक्ष की एक डाल से दूसरी डाल तक उड़ सकती है।

बड़ी-बड़ी छिपकलियों के काटने से बड़ा घाव हो जाता है, परन्तु इन घावों के कारण कोई मरता नहीं। बहुत से लोगों की धारणा है कि गोह और गिरगिटान के काटने से प्रायः लोग मर जाते हैं, परन्तु यह धारणा गलत है। अभी तक केवल छिपकलियों की दो जातियों में ही विष पाया गया है। इनके मुँह के अन्दर

विष-ग्रन्थियाँ होती हैं और विष को शत्रु के शरीर में प्रवेश कराने के लिए विष वाले दाँत भी होते हैं। एक विषैली जाति उत्तरी अमेरिका के मध्य-मेक्सिको से लेकर मध्य-अमेरिका तक मिलती है और दूसरी जाति न्यू-मेक्सिको और ऐरिजोना में। इसके शरीर पर गुलाबी और काली धारियाँ बनी होती हैं।



चित्र 2—पूंछ से मार करने वाली छिपकली

इन दोनों जातियों में से पहले का शरीर ज्यादा सुगठित होता है और उसकी पूँछ छोटी और मोटी होती है। उसके शरीर में चर्बी बहुत होती है। अतः, जब उसे खाना नहीं मिलता, तब वह इस चर्बी को धीरे-धीरे सोखकर कई सप्ताह तक बिना कुछ खाये जीवित रह सकती है।

इन दोनों के विष से छोटे जीव-जन्तु शीघ्र मर जाते हैं। बहुधा मनुष्य भी इनके काटने से मर जाते हैं। विषैली होने पर

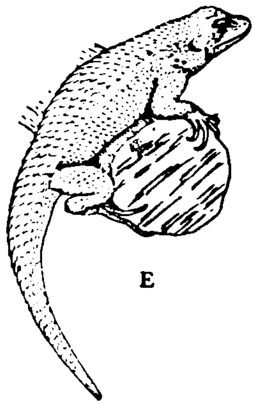
भी लन्दन के चिड़ियाघर में ये पालतू बनाकर रखी गयी हैं। इनके रक्षक इनको बिना किसी भय के उठाते रहते हैं। इस सिधाई का कारण शायद यह है कि लन्दन में मध्य अमेरिका के बराबर गर्मी और धूप नहीं रहती। इन दोनों के अभाव के कारण शायद इन छिपकलियों की शक्ति कम हो जाती है। ये प्रायः दो फुट लम्बी होती हैं और इनके शरीर की खाल खुरदरी होती है।

दूसरे प्रकार की छिपकली अण्डे देती है। ये अण्डे बहुत बडे, छिलकेदार और सफेद रंग के होते हैं। एक पशुशाला में $2\frac{3}{4}$ इंच लम्बे और $1\frac{1}{2}$ इंच चौड़े अण्डे देखे गए थे जिनके माँ-बाप की लम्बाई $19\frac{1}{2}$ इंच थी।

अधिकांश छिपकलियाँ स्थल पर रहती हैं, परन्तु कुछ वृक्षों पर, कुछ जल में और बहुत थोड़ी-सी जल और स्थल दोनों पर रहती हैं। वैसे तो ये किसी प्रकार का शब्द नहीं करतीं, लेकिन इन्हें छेड़ा जाय तो बड़ी तेजी के साथ फुफकार मारती हैं। कभी-कभी घरों की दीवारों पर रेंगनेवाली छिपकलियाँ किलक-किलक का शब्द करती हैं।

कुछ छिपकलियों में रंग बदलने की अद्भुत शक्ति होती है। यह परिवर्तन केवल आत्म-रक्षा के निमित्त होता है। इससे उन्हें अपनी परिस्थितियों के अनुसार छिपने में बड़ी सहायता मिलती है। ये छिपकलियाँ परेशान करने पर अनेक प्रकार के रंग बदलती हैं। ये रंग देखने में बड़े सुन्दर मालूम होते हैं। इसीलिए ये

छिपकलियाँ उष्ण तथा शीतोष्ण कटिबन्ध में ही पायी जाती हैं। और इंगलैण्ड में इनकी केवल तीन ही जातियाँ मिलती हैं।



E

चित्र 3—सिलोपोरस स्पाईनोसस

ऋतु परिवर्तन के समय नर गहरे हरे रंग के हो जाते हैं। जून के महीने में मादा एक दर्जन पतले छिलकेदार अंडे देती है। मादा इन अंडों को रेत में खोदकर एक गड्ढे में रख देती है और गड्ढे को पत्तियों इत्यादि से ढँक देती है। जुलाई और अगस्त में इन अंडों से बच्चे निकलते हैं। इन बच्चों की लम्बाई आधा इंच की होती है। परन्तु एक प्रकार की रेत में रहने वाली मादा छिपकली चूहों की तरह बच्चे देती है।

क्वीन्सलैंड और उत्तरी आस्ट्रेलिया की झालदार छिपकली आश्चर्यजनक जीव है। इसकी लम्बाई तीन फुट की होती है। इसकी गर्दन के चारों ओर झालर होती है, जिसे यह क्रुद्ध होने पर पूरा फैला देती है। सामान्यतः यह झालर तह की हुई उसके

शरीर के दोनों ओर रखी रहती है। पीले रंग की इस झालर में लाल रंग के धब्बे पड़े होते हैं। इसे सहसा खोलकर शत्रु के



चित्र 4—सींग वाली छिपकली

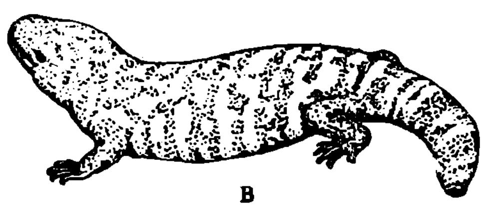
सामने यह एक भयानक रूप धारण कर लेती है। इस छिपकली की रूप-रेखा अत्यन्त भयानक है। परन्तु वह हानिकारक जीव नहीं है। दौड़ते समय यह अपने सिर और पूँछ को ऊपर उठा लेती है।

खुरदरी पूंछवाली एक प्रकार की छिपकली, जिसको अरब के निवासी हार्दिम या कार्दुम कहते हैं, देखने योग्य होती है। अपने शत्रु से पीछा छुड़ाने के लिए वह बड़ी शीघ्रता से दौड़ती है और थोड़ी दूरी के बाद रुककर पीछे देखने लगती है। इस समय वह अपना सिर नीचे-ऊपर करती है और फिर अपने शत्रु से बचने के लिए दौड़ने लगती है।

पश्चिमी तथा दक्षिणी आस्ट्रेलिया में एक विचित्र मोलोच छिपकली पायी जाती है, जिसका सिर, शरीर, हाथ, पैर तथा पूंछ, सारे अंग काँटों से भरे होते हैं। सिर के पीछे के काँटे आधे इंच लंबे होते हैं, परन्तु यह छिपकली केवल 5 इंच लम्बी होती

है। भयानक रूप की होते हुए भी यह छिपकली हानिकारक नहीं होती है और अपने शत्रु के शरीर पर काँटे कभी नहीं चुभोती, यद्यपि प्रकृति ने ये काँटे उसकी रक्षा करने के लिए ही बनाए हैं। ये छोटी-छोटी चीटियाँ खाती हैं और एक बार में 1500 चीटियाँ खा जाती हैं।

सिंगी छिपकली एक अपूर्व जीव है। इसका शरीर चपटा और चौड़ा होता है। यह केवल 5 इंच लम्बी होती है। अमेरिका तथा मेक्सिको में इसकी 15 विभिन्न जातियाँ पाई गई हैं। इनका शरीर और सिर नुकीले काँटों से सुसज्जित होता है, परन्तु अत्यन्त आश्चर्यजनक बात तो यह है कि जब कोई जीव इस पर आक्रमण करता है, तो यह अपनी आँखों के कोनों से कई फुट तक खून की धारा फेंकती है। यदि इसको कोई उल्टा कर दे, तो यह क्रोधित होकर बड़ी शीघ्रता से अपनी आँखों से खून फेकने लगती है, फिर शान्त होकर गिर पड़ती है। उस समय ऐसा प्रतीत होता है मानों यह मर गयी हो।



B

चित्र 5—गीला छिपकली

मध्य-अमेरिका के उष्ण प्रदेशों में एक ऐसी जाति की छिपकली पायी जाती है जिसके सिर और पूँछ की खाल ऊपर को ओर

उठी होती है। सिर में उठी हुई खाल केवल नर में ही होती है। प्राचीनकाल के लेखकों ने इसके विषय में बड़ी अद्‌भुत बातें लिखी हैं। एक लेखक का कहना है—"सिरेनिका के प्रदेश में एक सर्प रहता था, जो बारह उँगलियों से ज्यादा लम्बा नहीं था। उसके ऊपर एक सफेद चिह्न होता था। उसकी फुफकार से अन्य सर्प बहुत डरते थे। वह अन्य साँपों के समान कुंडली नहीं लगाता था। वह अपने विष के द्वारा झाड़ियाँ तथा छोटे पौधे को जला डालता था। वह अपने अगले भाग को उठाकर चलता-फिरता था और पत्थर के भी टुकड़े-टुकड़े कर देता था। लोगों का विचार था कि उसके 8 फुट ऊँचे दो बड़े-बड़े पंख थे और उसका सिर राजमुकुट के समान दिखाई पड़ता था···।"

एक और लेखक का वर्णन है कि उसका विष प्राणघातक होता है। उसकी फुफकार से बड़े-बड़े विषधारी सर्प भी मर जाते हैं। ऐसी ही एक और कल्पित कथा है कि एक बार एक मनुष्य घोड़े पर सवार होकर एक बल्लम से उसे भोंकने ही जा रहा था कि उसके विष से वह सवार तथा घोड़ा दोनों ही देखते-देखते मर गए।

ये सब कल्पित कहानियाँ हैं। सच तो यह है कि प्राचीन समय के लोग इन जीवों के विषय में बिल्कुल अनभिज्ञ थे, अतः उनकी कथाएँ केवल कपोलकल्पित ही कही जा सकती हैं।

ये छिपकलियाँ वृक्षों पर ही रहती हैं और बड़ी तेजी के

साथ वृक्षों की डाली पर चलती हैं। ये पानी में झुकी हुई डालों पर बड़े आनन्दपूर्वक आराम करती हैं और बिना किसी संकोच के शीघ्र ही पानी में डुबकी लगाती हैं। तैरते समय इनकी गर्दन तथा पूँछ ऊपर निकली रहती है।

घरों में रहने वाली छिपकली

घरों की दीवारों पर रेंगने वाली छिपकलियों की लगभग तीन सौ जातियाँ अभी तक देखने में आयी हैं। ये मुख्यतया ऊष्ण प्रदेशों में पायी जाती हैं। इस प्रकार की अधिकांश छिपकलियाँ बहुत छोटी होती हैं। बड़ी-से-बड़ी छिपकलो 15 इंच लम्बी होती है और शेष तीन या चार इंच से ज्यादा लम्बी नहीं होती।

प्रायः सब छिपकलियों की आँखों में पारदर्शक झिल्ली होती है। इनमें पलकें नहीं होती। सबकी उँगलियों में ऐसी व्यवस्था होती है, जिनकी सहायता से छिपकली चिकनी वस्तुओं से चिपक सकती है और छत में उलटी होकर चल सकती है। यद्यपि यह निर्दोष होती है, तथापि लोग इसकी भिन्न-भिन्न शक्तियों का वर्णन किया करते हैं।

ऐसा कहा जाता है कि छिपकली अपने पंजों से विष निकालती है और जिस मनुष्य के ऊपर से चली जाती है, उसके शरीर पर उसके पंजों से घाव बन जाते हैं। उत्तरी अफ्रीका, अरब तथा सीरिया की एक छिपकली को लोग कोढ़ पैदा करने वाली छिपकली के नाम से पुकारते हैं। उसके विषय में यह भी कहा गया है कि

उसके दाँत इतने पैने होते हैं कि वह छिपकली अपने दाँतों से लोहे की चद्दर में छेद कर देती।



चित्र 6—घरों में रहने वाली छिपकली

प्रायः सब छिपकलियाँ दिन भर छिपी रहती हैं और रात में शिकार के लिए निकलती हैं। कुछ दिन में ही घूमती-फिरती हैं और रात्रि के समय सोती हैं। बहुत सी छिपकलियाँ वृक्षों की डालों पर रहती हैं। कुछ हमारे घरों और कुछ रेत में बिल बनाकर पृथ्वी के अन्दर रहती हैं। बिल में रहने वाली छिपकली में शोषक नल-दंड नहीं होते हैं और वह बनावट में, घरों में रहने वाली छिपकली से दुर्बल होती है। किसी-किसी जाति की छिपकली की उँगलियों में सिकोड़ने वाले नाखून होते हैं। इन छिपकलियों का शरीर छोटे पैरों के ऊपर सधा रहता है और इनकी पूँछ बड़ी आसानी के साथ टूट जाती है।

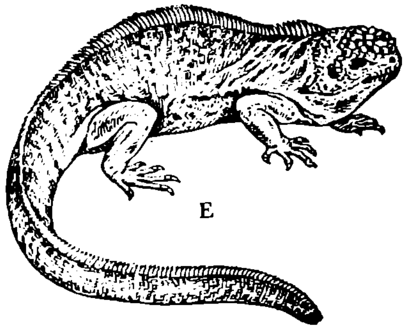
इन छिपकलियों की सबसे बड़ी जाति बंगाल, दक्षिणी चीन,

मलाया प्रायद्वीप के द्वीपों में बहुतायत से पायी जाती हैं। इन देशों के निवासी इस छिपकली को 'तोकाय' के नाम से पुकारते हैं, क्योंकि यह चिल्लाते समय तोकाय का शब्द करती हैं और बहुत देर तक जोर से चिल्लाती रहती हैं। यह छिपकली केवल कीट-पंतगों पर ही निर्वाह नहीं करती, वरन् चमगादड़ों, चूहों, छोटी-छोटी चिड़ियों तथा छोटी-छोटी छिपकलियों को भी आनन्द-पूर्वक खा जाती है।

एक छोटी जाति की मोटी पूँछवाली छिपकली में कुछ अपूर्व गुण पाये जाते हैं। वह दक्षिणी यूरोप, एशिया, आस्ट्रेलिया तथा दक्षिणी अमेरिका में मिलती हैं। उसकी उँगलियों में शोषक नल-दंड नहीं होते और उसकी छोटी पूँछ अत्यन्त मोटी होती है। उसमें एक पुष्टिकर वस्तु जमा रहती है, जिसे वह छिपकली भोजन के अभाव के समय शोषण किया करती है। आस्ट्रेलियन जाति का रंग धब्बेदार भूरा होता है, परन्तु उसके चलने का ढंग अत्यन्त विचित्र होता है। वह दूसरी छिपकलियों के समान पेट के बल नहीं चलती, वरन् अपने पैरों के बल अपने शरीर को उठाकर और अर्धगोलाकार बनाकर धीरे-धीरे आगे बढ़ती है। इस प्रकार के चलने की रीति अभी तक किसी अन्य जीव में नहीं देखी गयी है।

आस्ट्रेलिया आश्चर्यजनक जीव-जन्तुओं का घर है। वहाँ पर एक असाधारण छोटी पूँछ वाली छिपकली होती है। उसकी पूँछ

बहुत छोटी चौड़ी और उसके सिर के समान मालूम होती है। सिर और पूँछ में इतनी समानता है कि उसके अनुसंधानकर्त्ता ने उसे दो सिरवाली छिपकली बतलाया था। दूर से देखने वाला आसनी से नहीं बतला सकता कि उसका सिर किस ओर है।



चित्र 7—समुद्री छिपकली

यह छिपकली फुर्तीली नहीं होती। किसी जीव के आने पर वह हटती भी नहीं। अतः उसको वहाँ के निवासी बड़ी आसानी से पकड़ लेते हैं। यह निद्रालु छिपकली के नाम से प्रसिद्ध है। शीतकाल में लम्बी निद्रा के समय वह छिपकली पूँछ में भरे हुए भोज्य पदार्थ को धीरे-धीरे घुलाकर खाती रहती है। यह खाना चर्बी के रूप में पूँछ में भरा रहता है। अन्य ऋतुओं में वह सर्प, छिपकली, केंचुए तथा फल खाकर जीवन व्यतीत करती है। मादा अंडों के स्थान में बच्चे देती है, परन्तु एक बार में केवल एक ही बच्चा देती है, और इस बच्चे की लम्बाई मादा की लम्बाई से आधी होती है। इतना बड़ा बच्चा और कोई दूसरी छिपकली नहीं देती।

दक्षिणी यूरोप तथा उत्तरी अफ्रीका की भूरी छिपकली को दूर से देखने पर उसके पैर मालूम भी नहीं होते । बहुत छान-बीन करने के पश्चात अत्यन्त छोटे चार पैर मिलते हैं । प्रत्येक पैर में केवल तीन उँगलियाँ होती हैं जिनकी सहायता से वह चल फिर नहीं सकती । वह साँप के समान रेंगती है, अतः बहुत से मनुष्य उसे साँप ही समझ लेते हैं ।

यह छिपकली लगभग 13 इंच लम्बी होती है, किन्तु उसकी पूँछ उसके सम्पूर्ण शरीर की आधी होती है । यह प्रायः गीली मिट्टी में रहना पसन्द करती है और केंचुए, घोंघे, कीट-पतिंगे तथा छोटे-छोटे जन्तुओं को खाती रहती है । यद्यपि यह हानि नहीं पहुँचाती, तथापि लोगों का विश्वास है कि यह विषैली होती है । लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि इसके काटने से गाय भी मर जाती है, परन्तु अभी तक इसके मुँह में कोई विष-ग्रन्थि नहीं पायी गयी है ।

विशाल छिपकलियाँ

संसार में सब छिपकलियाँ छोटी ही नहीं होती । कुछ इतनी विशाल होती है कि उनका अनुमान बिना देखे नहीं किया जा सकता । बहुत बड़ी छिपकलियाँ अफ्रीका, भारत, मलाया के द्वीपों तथा आस्ट्रेलिया में पायो जाती हैं । इनको गिरगिटान, विसखपरा और गोह कहते हैं । मलाया की गोह सबसे बड़ी होती है । इसकी लम्बाई लगभग 23 फुट तक होती है ।

गिरगिट

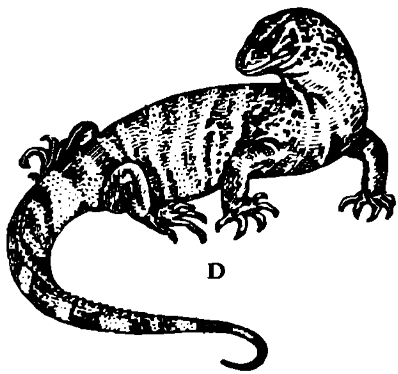
गिरगिटान तो बहुत ही साधारण जीव है और इसकी आकृति प्रायः सब लोग जानते हैं। इसकी विशेषता है इसके सिर पर चोटी का होना। इसमें रंग बदलने की शक्ति भी होती है परन्तु यह घबड़ाकर के ही रंग बदलता है। गिरगिटान दोपहर की अपेक्षा सायंकाल के समय अधिक गहरे रंग का होता है। नर गिरगिटान बड़ा लड़ाकू होता है और लड़ने के समय भी अपना रंग बदलता है। जब मादा उसके पास पत्तियों में छिपी बैठी रहतो है, तब यह खूब प्रेम-क्रीड़ा करता है और मादा के पास अनेक प्रकार के खेल किया करता है। यह अभिनय नर गिरगिटान केले के पत्ते या किसी



चित्र 8—गेंडा की तरह छिपकली

टीले के ऊपर करता है और फिर धीरे-धीरे मादा की ओर जाता है। इस समय इसका रंग हल्का लाल-पीला होता है। इस समय यह अपने शरीर के अगले भाग को ऊपर उठाकर अपने सिर को

ऊपर-नीचे हिलाता रहता है। इस अभिनय में इसका मुँह खुलता और बन्द होता रहता है। परन्तु यह कोई शब्द नहीं करता। यदि कोई मनुष्य या जीव इस नर को पकड़ ले जाता है, तो दूसरा नर कुछ घंटों पश्चात् पहले नर के समान उसी स्थान पर अभिनय करने लगता है। गिरगिटान 14 इंच लम्बा होता है और उसकी पूँछ उसके शरीर से लगभग चौगुनी बड़ी होती है। उसका संपूर्ण शरीर तथा पूँछ खालों से भरा होता है। जिस समय वह क्रोधित हो जाता है या अपना भोजन करता है, उस समय उसका सिर और कंठ गहरे लाल रंग का हो जाता है, परन्तु उसका हलका भूरा शरीर हलका पीला पड़ जाता है।



चित्र 9--केप मानीटर छिपकली

गिरगिटान के रंग बदलने के विषय में एक लेखक का वर्णन है कि एक गिरगिटान एक वृक्ष की डाली से नीचे उतर रहा था उस समय उसका रंग हल्के नील के समान था। वह शीघ्रता से तने से उतरकर वृक्ष के तने के नीचे एकाएक रुक गया। यहाँ

पर एक या दो मिनट रुककर उसने एक टिड्डे को बड़े जोर से काटा। काटने के साथ ही उसका नीला रंग तुरन्त उड़ गया और अब उसका शरीर पृथ्वी के रंग का भूरा हो गया और वह घास पर दौड़ने लगा। कुछ क्षण पश्चात् वह फिर दूसरे वृक्ष पर चढ़ गया और फिर उसका रंग हल्के नीले रंग का हो गया।

बिसखपरा

बिसखपरा को अरब के निवासी औरान कहते हैं। यह स्थल पर ही रहता है, परन्तु इस जाति के कुछ जीव ऐसे भी हैं जो जल तथा स्थल दोनों पर रहते हैं। रेतीले स्थानों तथा घने जंगलों में भी कुछ बिसखपरे पाए गए हैं। ये सर्वभक्षी होते हैं, अर्थात् जिस किसी जीव को ये मार सकते हैं, उसी को खा जाते हैं। बिसखपरा 6 या 7 फुट लम्बा होता है। लोगों का यह दृढ़ विश्वास है कि यह अत्यन्त विषैला होता है और इसके काटने से मनुष्य तुरन्त मर जाता है। परन्तु वैज्ञानिकों ने इसके शरीर के किसी भी भाग में विष के लक्षण नहीं पाए। जब इससे कई जीवों को कटाया गया, तो उनमें से कोई न मरा। अतः इन प्रयोगों के फलस्वरूप यह कहा जा सकता है कि बिसखपरा के शरीर या मुँह में कहीं विष नहीं होता।

गोह

गोह के विषय में भी बहुत सी कल्पित तथा भ्रममूलक कथाएँ प्रसिद्ध हैं। इसकी लम्बाई भी बहुत होती है। लगभग 21½ फुट

तक की गोह मिली हैं। साधारणतया यह 7 फुट से लेकर 15 फुट तक होती है। इसके शरीर में काँटे नहीं होते, परन्तु खाल खुरदरी होती है। गोह अफ्रीका, भारतवर्ष, दक्षिणी चीन, मलाया, फिलीपाइन द्वीप समूह और आस्ट्रेलिया में मिलती है। यह घरों में, पानी में तथा वृक्षों की डालियों में रहती है। पानी में तैरते समय इसके पैर शरीर से चिपक जाते हैं और पूँछ पतवार का काम करती है। इसका खाना अनेक प्रकार का है। स्याम देश में यह मुर्दों का मांस खाती रहती है और कभी-कभी तो अपने मरे हुए साथी या सम्बन्धी को खा जाती है। कुछ गोहें, गिलहरी का शिकार करती हैं और कुछ छोटे-छोटे कछुओं को निगल जाती हैं। पेट के भीतर कच्छपपृष्ठ के टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। कुछ गोहों के पेट के अन्दर खाद में पैदा होने वाले भौंरे मिले हैं। ये गोहें भौंरों को खाने के लिए हाथी और भैंसों के मल के निकट घूमा करती हैं।

बर्मा के निवासी कुत्तों की सहायता से इन गोहों के अंडों का पता लगाते हैं और उन अंडों को लाकर खाते हैं। कारेन जाति के जंगली मनुष्य इनको पकड़ने के लिए अनेक प्रकार के जाल लगाते हैं और बाँस में फन्दे बनाते हैं। ये लोग इन्हें पकड़कर इनका सिर काट देते हैं और धड़ को आग में भूनकर बड़े चाव से खाते हैं। इन लोगों का भी कहना है कि गोह के सिर में विष होता है।

सिंहाली कबरा गोह दलदल में रहना पसन्द करती है, और यदि स्थल पर कोई उसके पास पहुँचे, तो वह तुरन्त जल के भीतर चली जाती है। इसका सम्पूर्ण शरीर पीले खालों से ढका हुआ होता है। इसी कारण सिंहाली इसे कबरा गोह कहते हैं।

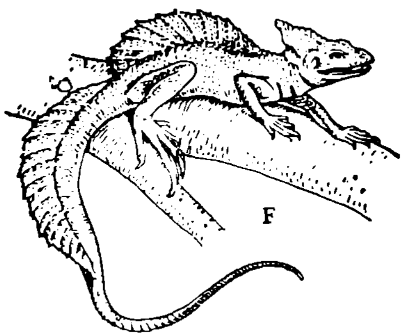


चित्र 10—भारतीय गोह

इन लोगों का दृढ़ विश्वास है कि इसके ऊपर की चरबी चर्म रोगों के लिए अचूक दवा है, परन्तु अन्दर की चरबी अत्यन्त विषैली होती है। सिंहाली बड़ी चतुरता के साथ इनका विष निकालते हैं और उस विष को देहातियों को बेचते हैं। इस विष के निकालने में गोहों को बड़ी निर्दयता साथ के मारा जाता है। यहाँ के निवासी गोह से एक प्रकार का तेल भी निकालते हैं जिसे ये कबरा कहते हैं।

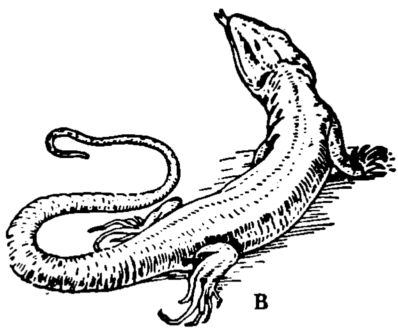
इस विचित्र तेल के बनाने में कबरा गोह को बड़ी पीड़ा पहुँचायी जाती है। बड़े-बड़े कड़ाहे खुले स्थानों में चूल्हों पर रखे जाते हैं और अनेक प्रकार के विषैले साँपों के सिर छेदकर उन्हें इन कड़ाहों के ऊपर लटका दिया जाता है। साँपों के सिरों के अन्दर की वस्तु उनके विष के साथ इन कड़ाहों में गिरकर इकट्ठा होती है, तब इस विष में संखिया और दूसरी दवाएँ मिलाई जाती हैं और ये सब मनुष्य की खोपड़ी में उबाली जाती हैं। इस खोपड़ी के पास तीन कबरा गोहें बंधी रहती हैं। ये तीनों गोहें चूल्हे के तीन ओर रहती हैं। इन तीनों गोहों को यहाँ तक मारा जाता है कि ये फुफकारने लगती हैं और इनके फुफकारने से आग खूब तेज जलने लगती है। उनके मुँह से निकले हुए फेन को लोग उस उबलते हुए मिश्रण में मिला देते हैं। थोड़ी देर बाद उस उबलते हुए मिश्रण के ऊपर तेल की तह जम जाती है और कबरा तेल तैयार हो जाता है। इसको बनाते समय असुरों को एक मुर्गे की बलि भी दी जाती है।

—



चित्र 11—हेलमेट वाली छिपकली

यदि कोई गोह किसी के घर में घुस जाय या छत पर चढ़ जाय, तो लोग अपशकुन मानते हैं। उनकी धारणा है कि उस घर में कोई बीमारी या मृत्यु आने वाली है। प्राचीन काल में हमारे देश के चोर और डाकू ऊँची दीवारों पर चढ़ने के लिए गोह को काम में लाते थे। ऐसा करने के लिए किसी बलिष्ठ और मजबूत गोह को पकड़कर उसके पेट के कुछ ऊपर एक रस्सी कसकर बाँध देते थे। फिर इस प्रकार बंधी हुई गोह को दीवार पर चढ़ने के लिए छोड़ देते थे। यह गोह ऊपर चढ़कर और दूसरी ओर कूदकर उसमें चिपक जाती थी और बड़े जोर से उसमें अपने नाखूनों को गड़ा देती थी तब चोर या डाकू को रस्सी की सहायता से ऊपर चढ़ जाने में बड़ी सुविधा होती थी।



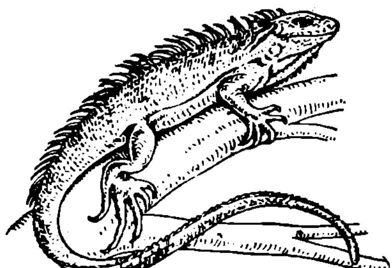
चित्र 12—लासेरटा विरिडिस

पालतू गोह को यदि कोई बड़ा अंडा मिल जाय, तो यह उसकी ओर देखती रहती है और फिर गर्दन उठाकर अपनी जीभ फेरकर उसकी जाँच करती है। तत्पश्चात उसे पूरा निगल जाती है और अपनी गले की नली से उसे फोड़ डालती है। यदि उसको सड़ा

जिनका वर्णन अत्यन्त रोचक है। तीन कमीलियनों को तीन अलग-अलग शीशे के बर्तनों में रखा गया। पहले बर्तन के अन्दर हरी पत्तियाँ डाल दी गयीं। परन्तु तीनों का रंग एक-सा बना रहा। इससे तो यह मालूम होता है कि कमीलियन के शरीर के रंग के ऊपर प्रकाश का ही प्रभाव पड़ता है। परिस्थितियों का उसके ऊपर कुछ ही प्रभाव पड़ता है। यदि छिपकली के शरीर पर प्रकाश डालते समय बीच में लाल या हरा शीशा रख दिया जाय, तो लाल या हरे प्रकाश का उस पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि उसका रंग ज्यों का त्यों बना रहता है। परन्तु यदि उसके शरीर पर नीला या हरा नीला प्रकाश डाला जाय, तो तुरन्त ही उस पर परिवर्तन दिखाई देने लगता है। इन किरणों का प्रभाव फोटोग्राफीवाली प्लेट पर आसानी से देखा जा सकता है।

प्रयोगों द्वारा यद्यपि अब यह प्रमाणित हो चुका है कि प्रकाश या तापक्रम के प्रभाव से तथा घबड़ाहट के कारण कमीलियन का रंग बदल जाता है, परन्तु इस परिवर्तन का उसकी खाल पर क्या प्रभाव होता है, इस पर खोज करना शेष है। परीक्षण करने से पता चला कि उसके चर्म में छोटे-छोटे अनेक बहुत से प्रकार के कण होते हैं, जिनके इकट्ठा या अलग हो जाने से चमड़े का रंग बदलने लगता है। माइक्रोस्कोप से वैज्ञानिकों ने इन कणों का अच्छी प्रकार अध्ययन किया है और इन लोगों का यही विचार है कि रंग बदलने में यही कण उसे बड़ी सहायता करते हैं।

कमीलियन बड़े सुस्त जीव होते हैं। ये बहुत धीरे-धीरे चलते फिरते हैं और इनके चलने से ऐसा मालूम पड़ता है कि इनके हाथ और पैर के जोड़ो में तेल देने की आवश्यकता है। घंटों तक ये उस वृक्ष की डाल पकड़े लटके रहेंगे। परन्तु इनकी आँखें सदा इधर-से-उधर देखती रहती हैं, और मक्खियों या किसी दूसरे कीड़ों की खोज में लगी रहती हैं। इनकी आँखें बहुत बड़ी होती हैं, जिनके ऊपर एक झिल्ली चढ़ी हुई होती है। यह झिल्ली दोनों पलकों के मिलने से बनी है। ये अपनी आँखें चारों ओर घुमा सकते हैं और किसी ओर देखने के लिए एक आँख दूसरी आँख के ऊपर निर्भर नहीं रहती। यह जीव नीचे या आगे-पीछे बिना गर्दन घुमाए देख सकता है।



D

चित्र 14 मछलीनुमा छिपकली

सबसे भी असाधारण इन जीव की जीभ है, जो कि पूरी लम्बाई पर जीव के शरीर तथा सिर के बराबर लम्बी हो जाती है। जीभ रबड़ के समान खिंच या बढ़ सकती है। उसकी नोक पर थैली है जिससे चिपचिपी लार निकलती रहती है। जिस

समय कमीलियन एक उड़ती हुई मक्खी को देखता है, और उसकी ओर धीरे-धीरे बढ़ता है तो 4 या 5 इंच की दूरी पर वह धीरे से रुक जाता है, फिर कुछ हिचकिचाहट के बाद एकाएक अपनी जीभ उसकी ओर फेंकता है और उतनी ही शीघ्रता से जीभ मुँह के अन्दर खींच लेता है और मक्खी को खा जाता है ।

कमीलियन के पैरों के पंजे दो विभागों में विभाजित होते हैं। अगले पैर में आगे की ओर दो उगलियाँ होती हैं और पीछे की ओर तीन । परन्तु पिछले पैरों की उंगलियों की बनावट ठीक इसके विपरीत होती है ।

कमीलियन बड़े लड़ाकू होते हैं । लड़ते समय ये अपने फेफड़ों में खूब हवा भर लेते हैं जिसके कारण ये बहुत मोटे और बडे दिखाई देते हैं । इतना फूला हुआ शरीर देखकर लोगों का कहना है कि ये केवल हवा पर ही जीते हैं ।

बहुत से कमीनियन आकार में छोटे होते हैं उनकी लम्बाई 10 इंच से ज्यादा नहीं होती है । मैडेगास्कर द्वीप की दो जातियाँ तो लगभग 24 इंच से अधिक लम्बी होती हैं, परन्तु संसार का बौना कमीलियन केवल 5 इंच लम्बा होता है । बौने कमीलियन की मादा एक बार में 12 बच्चे देती है । कमीलियन-वर्ग में यही एक जाति है जो अंडे नहीं देती वरन् बच्चों को जन्म देती है, परन्तु रंग बदलने की शक्ति इनमें कम होती है ।

कुछ जाति के नर कमीलियन की आँखों के ऊपर दो लम्बी हड्डियाँ निकली हुई होती हैं, जिनको लोग सींग समझ लेते हैं। ये सींगी कमीलियन के नाम से प्रसिद्ध हैं।

बौना कमीलियन दक्षिणी अफ्रीका में मिलता है। इसके शरीर का रंग हरा होता है और शरीर के दोनों ओर बड़े-बड़े लाल रंग के चप्पे होते हैं और सम्पूर्ण शरीर पर गहरे लाल रंग के धब्बे पड़े होते हैं। रात्रि के समय इसका रंग ऐसा ही बना रहता है। दिन के समय हरा रंग अधिक दिखाई पड़ता हैं और शरीर के दोनों ओर के लाल चप्पे में कई नीले धब्बे निकल आते हैं। क्रोधित होने के समय उनका रंग फीका हरा हो जाता है और लाल चप्पों में मटमैला-भूरा रंग आ जाता है। कभी-कभी सम्पूर्ण शरीर काला पड़ जाता है। यह जाति शीतकाल में भी आराम से रह सकती है।

साधारणतया कमीलियन उत्तरी अफ्रीका, सीरिया, एशिया-माइनर स्पेन, दक्षिण भारत, लंका आदि प्रदेशों में पाए जाते हैं। ये बौने कमीलियन के विपरीत अंडे देते हैं। अक्तूबर के महीने में मादा वृक्ष की डालियों से नीचे उतरकर वृक्ष के निकट एक गढ्ढा खोदकर अंडे देती है। बसन्त ऋतु में इन अंडों से बच्चे निकलते हैं। इसी बीच में इनकी माँ भी पृथ्वी के अन्दर एक बिल में पड़ी रहती है, क्योंकि यह शीतकाल की ठंड को सह नहीं सकती। फिर वातावरण के उष्ण होने पर यह बाहर निकल आती है।

कमीलियन पाले भी जाते हैं। यह किसी बर्तन से पानी नहीं पीते, परन्तु पत्तों में पड़ी हुई बूँदों को चाट लेते हैं। कमीलियन प्रायः कीड़े-मकोड़ों, कीट-पतंगों और तितलियों के अंडों से निकले हुए छोटे-छोटे जीवों को बड़े चाव से खाते हैं। किसी पत्र के एक संवाददाता ने लिखा था कि उसने कुछ कमीलियन को उबाले हुए करमकल्ले के ऊपर बहुत काल तक जीवित रखा है। वह आगे लिखता है—ये जीव छोटे-छोटे करमकल्ले के टुकड़ों को जीभ से नहीं खाते थे परन्तु अपना मुँह खोलकर खा जाते थे। आज भी ये जीवित हैं और पाँच महीनों से बराबर ये इन्हीं उबाली हुई पत्तियों पर रह रहे हैं। प्रत्येक दिन इन्हें ताजा करमकल्ला दिया जाता है और जब इसके टुकड़े करके पिंजड़े में रख दिए जाते हैं तो ये उसकी खुशबू पहचान लेते हैं और उसको खाने के लिए धीरे-धीरे आगे जाने का प्रयत्न करने लगते हैं।

यह कथा अत्यन्त आश्चर्यजनक है और इनसे मालूम होता है कि इन जीवों में भी बुद्धि का विकास हो सकता है।

बिना पैरवाली छिपकली

इस वर्ग का अन्धा कीड़ा बहुत प्रसिद्ध है। यह इंगलैंड पश्चिमी एशिया तथा अलजीरिया में बहुत ज्यादा पाया जाता है। इसका आकार गोल लम्बा होता है। जिसके कारण लोग इसे सर्प समझ बैठते हैं। साँप के विपरीत इसमें बाहरी कान के छेद और चलती हुई पलकें होती हैं। इन दोनों के होने से यह पहचान

जा सकता है। इन अन्धे कीड़ों के बारे में बहुत सी किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। एक प्राचीन पुस्तक में लिखा है कि ये कीड़े गाय को घेर डालते हैं और अपनी पूँछ को गाय के पैरों में लपेट देते हैं। अन्ध कीड़े गाय को काट लेते हैं और गाय थोड़ी देर में मर जाती है।

अभी भी कुछ ऐसे मनुष्य हैं जो इस अन्धी छिपकली को अजगर सर्प से भी अधिक विषधारी मानते हैं, यद्यपि वास्तव में यह हानिकारक है। छूने पर भी वह किसी को काटती नहीं। दूर से मालूम होता है कि यह छिपकली अन्धी है, इसलिए लोग इसे अन्धी छिपकली कहते हैं। परन्तु उसका निरीक्षण करने के पश्चात् प्रतीत होता है कि उसकी आँखें यद्यपि बहुत छोटी हैं तथापि वे बहुत दूर तक देख सकती हैं।

बड़ी हो जाने पर यह छिपकली लगभग 18 इंच लम्बी होती है। यह प्रायः भूरे रंग की होती है, परन्तु पुराने नर की पीठ काली हो जाती है और उस पर छोटे-छोटे नीले धब्बे लम्बी-लम्बी पंक्तियों में सुसज्जित रहते हैं। बच्चों की पीठ सफेद होती है और पेट काला होता है। पीठ के बीचो-बीच एक लम्बी काली धारी पाई जाती है। यह काली धारी बड़ी मादा में ही मिलती है। सम्पूर्ण शरीर छोटी-छोटी खालों से ढका रहता है और साँप की केंचुल की भाँति एक ही साथ सब खाल गिर पड़ती है। यदि इसको कोई पकड़ता है, तो यह सिकुड़ कर बहुत कड़ी हो जाती

है। इसका शरीर दीवाल की छिपकली की पूंछ की तरह बना हुआ होता है। इस अन्धे कीड़े का टूटा हुआ शरीर महीनों में पूरा बन पाता है।

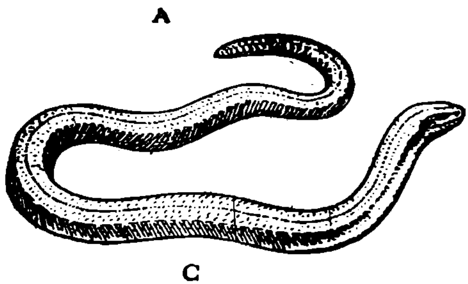
यद्यपि अन्धे कीड़े दलदल या गीली मिट्टी में रहना बहुत पसन्द करते हैं। फिर भी ये धूप में आराम से लेटने के लिए बाहर निकल आते हैं। ये केंचुए घोंघे और अनेक प्रकार के कीट पतंगों को पकड़कर अपने दाँतों से चबा डालते हैं। इस बात में भी ये साँपों से भिन्न होते हैं, क्योंकि जिस जीव को ये पकड़ते हैं उसे समूचा निगल जाते हैं।

सितम्बर के महीने के प्रारम्भ होने पर मादा लगभग बीस बच्चे देती है। ये शिशु छिपकलियाँ दो या तीन इंच लम्बी होती हैं और बहुत धीरे-धीरे बढ़ती हैं। चार या पाँच वर्ष पश्चात पूरी लम्बी हो जाती हैं। इस प्रकार की एक छिपकली को पकड़कर एक मनुष्य ने 23 वर्ष तक अपने यहाँ रखा था। इसके बाद वह मर गई।

शीतकाल के समय ये पृथ्वी के अंदर घुस जाती हैं। अक्तूबर के आरम्भ में बहुत नीचे बिलों में घुस जाती हैं और इन्हीं बिलों में जाड़े भर सोती रहती हैं, फिर मार्च के अंत में धीरे-धीरे निकलने लगती हैं। इन अंधे कीड़ों या छिपकलियों के पैर नहीं होते।

दर्पण-सर्प

दूसरी बिना पैरवाली छिपकली काँच के समान चिकनी होती है। इसे दर्पण सर्प भी कहते हैं। यह दक्षिण पूर्वी यूरोप, दक्षिण-पश्चिमी एशिया तथा उत्तरी अफ्रीका में मिलती है। इसके शरीर में अगले पैर नहीं होते हैं और पिछलें पैर नोक के समान निकले हुए बहुत छोटे होते हैं।



चित्र 15—दर्पणसर्प छिपकली

दर्पण सर्प 4 फुट लम्बे होते हैं और इनका शरीर चौकोर गोल तथा भूरे रंग के बकलों से ढका हुआ रहता है। इनका बाह्य रूप बहुत चिकना होता है जिसके कारण ऐसा मालूम होता है कि इनके ऊपर अभी पालिश की गयी है। इस छिपकली का शरीर कड़ा होता है और असानी से मुड़ नहीं सकता।

दर्पण सर्प बड़ा भयानक होता है, परन्तु बन्धन में रखने पर कुछ समय बाद वह पालतू हो जाता है और हाथ पर रखी हुई चीजों को खा लेता है। यह चूहों, छंछून्दर, आदि छोटे-छोटे जीवों को खाता है और कभी-कभी वाइपर सर्प को भी मारकर खा जाता

है। कभी कभी घोंघों, चिड़ियों के अंडों और बच्चों को भी पकड़ कर खा जाता है।

इस सरीसृप को दर्पण सर्प इसीलिए कहते हैं क्योंकि इसका शरीर काँच के समान कड़ा तथा शीघ्र टूटनेवाला होता है। यह अपनी पूँछ एकाएक अपने शरीर से अलग कर देता है। इसके शरीर की खाल शीशे के समान चमकती रहती है। एक किंवदन्ती है कि पूँछ टूटने के बाद यह जीव उस टूटी हुई पूंछ की खोज करता है और उसे ढूढ़कर फिर अपने कटे हुए धड़ में जोड़ लेता है या उसकी पूँछ खिसक-खिसक कर अपने बिछुड़े हुए मालिक के निकट जाकर जुड़ जाती है। पर ऐसा अभी तक देखा नहीं गया है।

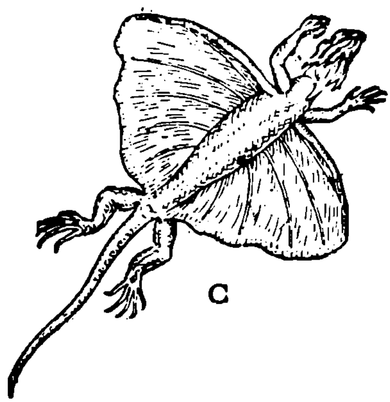
आस्ट्रेलिया तथा न्यूगिनी में एक दूसरे प्रकार की बिना पैरवाली छिपकली पाई जाती है। इसकी कुछ जातियों के पैर नहीं होते हैं और कुछ में पीछे के पैरों के कुछ चिह्न होते हैं। इनकी आँखों में पलकें नहीं होती और पुतलियां अधिक चौड़ी होती हैं। यह छिपकली दो फुट लम्बी होती है और इसको दो-तिहाई पूँछ बड़ी शीघ्रता से टूट जाती है। बहुधा लोग इसे सर्प समझ लेते हैं। बिना पैरवाली छिपकलियों में मध्य अमेरिका की छिपकली अत्यन्त विचित्र है। इसके पीले शरीर में काले धब्बे पड़े होते हैं। यह असाधारण छिपकली 18 इंच लम्बी होती है और चीटियों के बिलों में रहना बहुत पसन्द करती हैं। बैट साहब की राय है

थी। इन छिपकलियों को यहाँ के निवासी चीटियों की माँ भीं कहते हैं। लोग समझते हैं कि यह विषधारिणी होती है, परन्तु वास्तव में उसके विष नहीं होता। अमेरिका-निवासी कहते हैं कि चीटियाँ उसको बड़े प्रेम के साथ रखती है, और यदि यह छिपकली उस बिल से निकल जाय तो चिटियां भी बिल को छोड़कर चली जाती हैं।

उड़नेवाली छिपकली

सरीसृप संसार में जीवों ने उड़ने के लिए बड़ा प्रयत्न किया था और कई जीवों ने पर्याप्त सफलता भी प्राप्त की थी। प्राचीन काल में टेरोडैक-टाइल उड़ने में सफल हो गए थे, परन्तु कुछ कारणवश वे शीघ्र ही समाप्त हो तए। आज उनके फांसिल ही हमें प्राप्त हैं। आधुनिक काल में भी एक छिपकली ने उड़ने में काफी सफलता प्राप्त की है। इस समय इसकी 12 जातिया हैं, जो भारत में मद्रास, मलाया, प्रायद्वीप, सुमात्रा, जावा तथा बोर्नियों में पायी जाती हैं। ये लगभग 10 इंच लम्बी होती हैं और इनकी पूँछ केवल 5 इंच लम्बी होती है। ये वास्तव में उड़ नहीं सकती परन्तु ऊपर से कूदकर 60 फुट से अधिक, हवा में शरीर से बढ़ी हुई खाल के दोनों ओर के टुकड़ों की सहायता से जा सकती हैं। इसके बाद ये गिर पड़ती हैं। दोनों ओर की बढ़ी हुई खाल पसलियों की हड्डी की सहायता से पंख की तरह फैली रहती है। ये पसली की हड्डियों को आगे और पीछे की ओर

हिला-डुला सकती हैं। आराम करते समय पसलियाँ तथा पंख तह किए हुए पीठ और गर्दन के दोनों ओर रखे रहते हैं, परन्तु हवा में फिसलने के समय हवाई जहाज के पंखों के समान फैल



चित्र 16—उड़नेवाली छिपकली

जाते हैं। मलाया प्रायद्वीप की उड़नेवाली छिपकलियों की लम्बाई 1 फुट होती है। चलते फिरते समय इसमें कोई विशेषता नहीं होती, परन्तु उड़ते समय यह एक सुन्दर तितली बन जाती है, क्योंकि इसके पर गहरे नारंगी-रंग के होते हैं और इनमें अनेक प्रकार की काली धारियाँ पड़ी होती हैं।

यह छिपकली दूर से और जातियों की छिपकली के समान प्रतीत होती है। केवल पर तथा पसलियों के कारण यह दूसरों छिपकलियों से विभिन्न मालूम होती है। इसके शरीर का रंग गहरा भूरा होता है, जिसमें काले धब्बे और काली पट्टियाँ पड़ी हुई होती हैं। ये अधिकतर घने जंगलों में रहती हैं, जहाँ, पर इनके तितली के रंग के समान पंख रंग-बिरंगे फूलों में छिपने में सहायक होते हैं। इसलिए आसानी से इनके शत्रु इन्हें पकड़ नहीं सकते।

कछुए

प्रत्येक मनुष्य ने कछुए को देखा होगा । बहुत से धार्मिक प्रवृत्ति के लोग नदी के किनारे जाकर कछुओं को आटे की गोलियाँ खिलाया करते हैं । बाहर से उसका आकार देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि वे अपनी जात के घड़ियाल या छिपकली से भिन्न हैं और उसमें कुछ निजी विशेषताएँ हैं । परन्तु वे सभी विशाल सरीसृप परिवार के ही सदस्य हैं । उसका शरीर बाहर से एक कठोर खाल से ढका होता है । जिसके भीतर वह अपने मुँह, सिर तथा हाथ-पैर को सिकोड़े रहता है । भारत के अधिकांश दार्शनिकों ने मनुष्य के शरीर तथा आत्मा को कछुए के वाह्य आवरण तथा शरीर से समानता प्रकट की है । भगवान कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया था कि जिस प्रकार कछुआ अपने शरीर को अन्दर सिकोड़ लेता है, उसी प्रकार मनुष्य को अपनी इन्द्रियों को अपने वश में रखना चाहिए ।

स्थलीय कछुए

कछुए की कठोर बाहरी खाल के विकास के सम्बन्ध में विद्वानों ने लिखा है कि एक समय इस जीव का शरीर कड़ी त्वचा से ढका हुआ था और इस त्वचा के नीचे मोटे मांस की

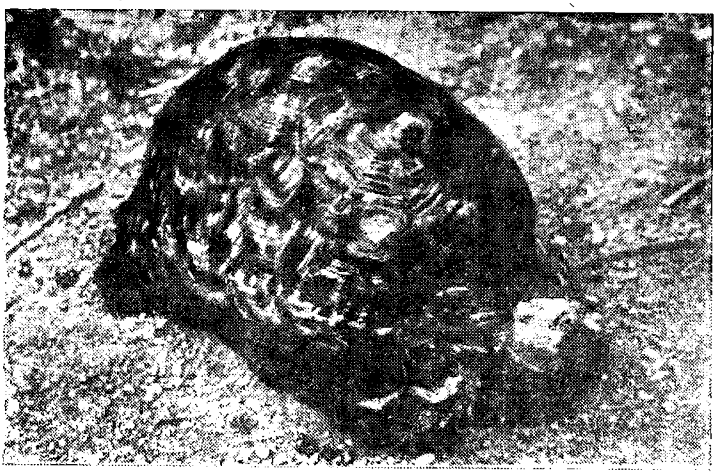
वास्तव में यह बात नहीं । क्योंकि जब ये पाले जाते हैं, तब इनको आप अपने हाथ से खाना खिला सकते है। वे यह पहचान जाते हैं कि उनका स्वामी कौन है । बागों में वे अपने रहने का स्थान ढूढ़ लेते हैं और प्रत्येक दिन उन्हीं स्थानों में घूम-फिर कर चले जाते हैं । एक ही रास्ते से वे सदैव चलते हैं । इससे प्रतीत होता है कि उनको स्थान तथा दिशा का ज्ञान रहता है ।

बेरिज साहब ने एक कछुए को अपने बाग में रखा । उसकी एक बुरी आदत यह थी कि वह सूर्यमुखी के पौदों के बीच रोज बैठता था और उसके बैठने से पौदों के डंठल गिर पड़ते थे । बेरिज साहब ने उसको बारबार उठाकर एक कोने पर रखा, परन्तु वह बारबार वहीं चला आता था । इससे मालूम होता है कि कछुए की स्मरण शक्ति साधारण नहीं होती । स्थलीय कछुओं की तीन जातियाँ यूरोप में मिलती हैं । उनके नाम—आइबेरियन, ग्रीसियन तथा मारजिन्ड हैं । आइबेरियन कछुए से प्रायः सब लोग परिचित हैं, क्योंकि ये बाहर से आते-जाते हैं । यह नौ इंच से अधिक लम्बा नहीं होता और इसकी जाँघ पर एक तिकोनी कील-सी निकली होती है जिससे वह अन्य जातियों से पहचाना जा सकता है । वह यूरोप के सब देशों में मिलता है । वह एशिया तथा अफ्रीका में भी मिलता है । उसकी आयु काफी होती है । लोगों का कहना है कि इंगलैंड में इस जाति का एक कछुआ 96 वर्ष तक जीवित रहा था ।

"कुमारी डी० जेनकिन्स ने उसके विषय में इस प्रकार से वर्णन किया है—मेरे चाचा अब 90 वर्ष के हैं और उनका कहना है कि यह कछुआ उस वक्त से है, जब वे छोटे थे और वह इतना ही बड़ा उस समय भी था। अक्टूबर के महीने में वह पृथ्वी के अन्दर चला जाता है और मार्च के महीने में निकलता है। निकलने पर उसकी जीभ काली रहती है। तीन चार हफ्तों के पश्चात् उसमें लाली आ जाती है। इसके बाद वह खाना शुरू कर देता है। वह छोटे-छोटे पौदों को खाता है। कभी-कभी मटर, बेर, रसभरी तथा साग के पौदों को बड़े चाव से खाता है। वह पैरों पर खड़ा होकर चलता है। गर्मी के दिनों में वह बड़ा प्रसन्न प्रतीत होता है। माली का बुरी तरह से पीछा करता है और उसके कुर्त्ते तथा पैरों को काट लेता है। इस कारण माली अपना काम ठीक प्रकार से नहीं कर पाता। अतः उसको घर में बन्द कर देते हैं। इस कछुए को पश्चिमी इंडीज से मल्लाह लाए थे और उन्होंने हमारे पुर्खों को दिया था।

ग्रीसियन या यूनानी कछुआ आइबेरियन कछुए की तरह होता है। परन्तु इसकी जाँघ में कील नहीं होती। यूनान में लोग इसे खाते हैं। इसके मस्तिष्क तथा मांस को साक में डालकर इसे भून कर लोग बड़े चाव से खाते हैं। इसके बनाने में बड़ी कुशलता तथा दक्षता की आवश्यकता है। होशियारी से इसको काटना होता है, क्योंकि यह अपने सिर को कच्छप पृष्ट के अन्दर तुरन्त

घुसेड़ लेता है । इस क्रिया में दक्ष लोग का अनुभव है कि इसकी पूँछ को सुहराते ही वह अपनी गर्दन को बाहर निकाल लेता है । अब इसकी गर्दन को तेज छुरी से काट देते हैं । फ्रांस के सैनिक अत्यन्त निर्दयता के साथ इस क्रिया को करते हैं । वे जलते हुए अंगारे को इसके सिर पर रख देते हैं जिसके कारण वह अपना सिर बाहर निकाल देता है ।



चित्र 1—तेन्दुआनुमा कछुआ (अफ्रीका)

कछुआ बिना जोड़े के नहीं रहता । अकेला होने पर बसंत के आते ही वह घबड़ाने लगता है और साथी की खोज में बाहर चला जाता है । कच्छप पृष्ठ की बनावट से नर और मादा कछुए की पहचान की जा सकती है । नर का पृष्ठ अर्धचन्द्र के समान होता हैं और मादा का चपटा एक-सा होता है ।

तीसरा मारजिन्ड कछुआ यूनान तथा सरडीनिया के प्रदेशों

में मिलता है। इसकी पहचान यह है कि इसकी पीठ का पृष्ठ भाग उठा हुआ होता है। अमेरिका के डब्बानुमा कछुए स्थल तथा पानीवाले कछुए के मध्य के हैं और इसके पिछले पैरों में झिल्ली भी होती है। ये शाकाहारी होते हैं परन्तु घोंघे, केचुए, मेढक इत्यादि को खा लेते हैं। छेड़ने पर मुंह तथा हाथ पैरों को खींच लेते हैं और अपने डब्बेनुमा पृष्ठ के अन्दर बन्द हो जाते हैं। इसी कारण इसका नाम 'बाक्स टारट्वाज' पड़ा है। ऐसी कच्छप जातियों में 'करोलाइना बाक्स टारट्वाज' देखने योग्य है। इसके सिर, हाथ, पैर तथा बकलों पर पीली और काली धारियों की सजावट होती है। अतः इस जाति के दो जीव मिलते-जुलते नहीं हैं। ये जंगलों में निवास करते हैं और बेरों, रसभरी, पौधों के तलों, केचुए तथा कीट पंतगों पर निर्वाह करते हैं। डिटमान साहब का कहना है कि जब एक प्रकार की काली जामुन बहुतायत से पैदा होती है, उस समय इन कच्छपों के आगे के दाँत रस भरे रहते हैं। अब इनका कुछ अभाव हो रहा है और अमेरिका की सरकार के कानून के अनुसार इसको पकड़ना और बाहर भेजना अपराध है।

उत्तरी अमेरिका के दक्षिण-पूर्वी भाग में एक विचित्र गोफर कछुआ पाया जाता है, जो अपना अधिकांश समय बिल के अन्दर बिताता है। यह अपने पैरों की सहायता से रेतीले स्थान पर बिल खोद लेता है। बिल 18 फुट तक लम्बी और 9 फुट गहरी होती

है । इन बिलों में मादा अंडे नहीं देती, अंडों के लिए वह अलग बिल खोदती है ।

मि० लोवरिज ने 1920 में दोदिमा में एक नया कछुआ पाया । यह मुलायम पृष्ठवाला कछुआ कहलाता है । इन्होंने लंदन की पशुशाला में ऐसे दो कछुओं को भेजा था । ये आठ इंच लम्बे होते हैं और दो इंच ऊँचे । इसका पृष्ठ अत्यन्त मुलायम होता है और उँगलियों से आसानी से दबाया जा सकता है । इसलिए ये चट्टानों की दरारों के बीच में रहते हैं । मि० लोवरिज ने एक समय एक ऐसे जीव को उसके स्थान से निकालना चाहा, तो उन्हें बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा, क्योंकि बिल के अन्दर उसने शरीर को फुला लिया जिसके कारण वह बाहर न आ सका । वह अन्य जातियों से बहुत अधिक चंचल होता है और काफी तेजी के साथ पृथ्वी पर चल-फिर सकता है ।

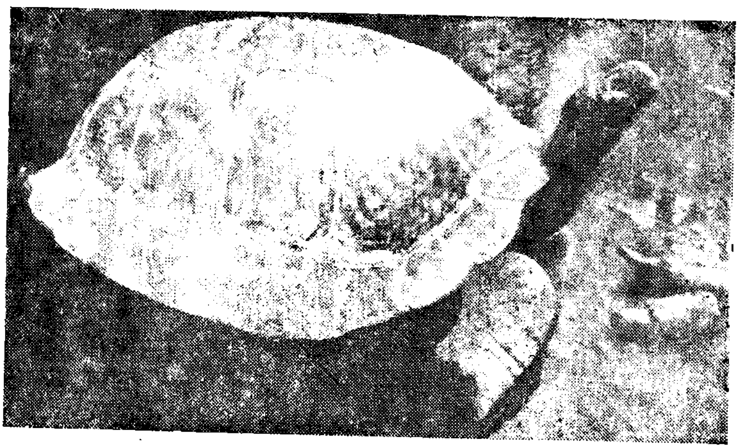
कुछ कछुए सुन्दर भी होते हैं । उनके पृष्ठ सुन्दर तथा विभिन्न रंगों के चिह्नों से सुसज्जित होते हैं । इस प्रकार के कछुए भारतवर्ष तथा लंका में पाए जाते हैं । उनकी पीठ उठी हुई होती है और उसमें वृत्ताकार धारियों वाली नालियाँ बनी रहती हैं । पृष्ठ का रंग काला होता है परन्तु उठी हुई नोके पीली होती हैं और इन्हीं नोकों से पीली धारियाँ भी चारों ओर फैली हुई रहती हैं । पेट के आवसरण पर अनेक प्रकार की पीली धारियाँ पड़ी रहती हैं । मादा अंडों को सुरक्षित स्थान पर रखती है । वह एक

बिल बनाती है, उसमें अंडों को रखकर मिट्टी से बन्द कर देती है और फिर उस उठी हुई मिट्टी के ढेर को इस प्रकार से दबा देती है, जिससे यह न जान पड़े कि इस स्थान पर कुछ रखा हुआ है। कुछ रूपवान कछुए मेडागास्कर में पाए जाते हैं। उसकी पीठ काली होती है और उस पर पीले चिह्न तथा धारियाँ होती हैं। यहाँ के निवासी इस कछुए से बहुत डरते हैं। मि० बोलेन्जर का कहना है कि लोग इसे छूना और देखना अशुभ मानते हैं। इसलिए यहाँ के निवासी न तो इस जीव को और न इसके अंडों को छूते हैं।

संसार से महान् कच्छप वर्ग का धीरे-धीरे विनाश हो रहा है। एक समय था जब वे उत्तरी अमेरिका, भारतवर्ष तथा यूरोप में मिलते थे परन्तु अब केवल थोड़े से जीव गैलपैगोस द्वीप में पाए जाते हैं जिनकी गिनती लगभग 13 है। कुछ पशुशालाओं में मिलते हैं। एक या दो हिन्द महासागर के द्वीपों में मिलते हैं। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि निकट भविष्य में ये जीव फाँसिलो में परिवर्तित हो जाएँगे। गैलापैगोस के कुछ द्वीपों में अब तो इन जीवों का नाम-निशान भी नहीं है। जीवित कछुओं में ये सबसे बड़े होते हैं। इनकी लम्बाई $5\frac{1}{2}$ फुट होती है।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक डारविन ने अपनी किताब में इन जीवों का वर्णन विस्तार से किया है। उनके समय में इन जीवों की अधिकता भी और वे ज्यादातर पहाड़ी तथा नमी वाले स्थनों में रहते थे।

इनमें से कुछ नर कछुओं का भार इतना अधिक था कि इनको उठाने के लिए 7 या 8 आदमियों की आवश्यकता पड़ती थी। जिन द्वीपों में पानी न था और न कोई जीव या वृक्ष थे, उन उजाड़ स्थानों पर ये रसदार नागफनी के डंठलों पर जीवन निर्वाह करते थे। जो कछुए ऊँचे स्थानों पर रहते थे, वे वहाँ पौदों की पत्तियों तथा कोई खाकर रहते थे। वे जल की खोज में दूर-दूर तक जाते थे और उनके चलने से एक प्रकार का रस्ता बन जाता था। झरने या पानी के सोते के निकट इस प्रकार के अनेक जीव पानी पीने के लिए इकट्ठे हो जाते थे। इनके झुण्ड पानी पीने के लिए पड़ी तेजी से पानी की ओर चले आते हैं और वे पहुँचते ही अपना सिर फैलाकर पानी में डाल देते हैं और जी भरकर



चित्र 2—भीमकाय कछुआ (वजन 270 पाउंड)

पानी पीते हैं दूसरा झुंड पानी पीकर धीरे-धीरे वापस जाने लगता है। डारविन साहब लिखते हैं कि यह दृश्य अत्यन्त विचित्र है।

पानी के स्थान पर जाने के समय उनके चलने की गत 4 मील प्रतिदिन के हिसाब से होती है। जब वे वहाँ पहुँच जाते हैं तब वे 3 या 4 दिन तक ठहरते हैं और फिर वापस लौटने लगते हैं।

पहले लोग इनका माँस बहुत खाते थे और नाविक इन द्वीपों पर अपने जहाजों को रोककर इन्हें इकट्ठा करते थे। कप्तान मोरेल ने 1825 में लिखा था कि एक समय बाहर जानेवाले जहाजों ने 600 से लेकर 900 महान कच्छपों को अपनी रसद के लिए रख लिया था। यही कारण है कि इनका धीरे-धीरे विनाश होता गया।

ऐलोपेन्टाइन कच्छप एक दूसरा महान् कछुआ है जिसकी कुछ जातियाँ जब भी मिलती हैं। ये हिन्द महासागर के द्वीपों में पाए जाते हैं। इन द्वीपों में राज्य की ओर से इनको मारने के लिए आज्ञा नहीं है। ये इतने बड़े होते हैं कि एक लड़का उन पर सवारी कर सकता है।

पानी के कछुए

जल में रहने वाले कछुए बहुत पाए जाते हैं। उनमें से कुछ सदा जल में रहते हैं, कुछ जल में तथा स्थल दोनों पर रहते हैं और कुछ ऐसे हैं, जो केवल समुद्रों में ही निवास करते हैं।

यूरोप के स्वच्छ जलवाले कच्छप पानी तथा स्थल दोनों में रह सकते हैं। ये कछुए बाहर भी भेजे जाते हैं। ये उत्तरी तथा मदद

यूरोप, एशिया माइनर तथा उत्तरी अफ्रीका में बहुतायत से मिलते हैं। इनकी पीठ चौड़ी और समतल होती है। इनकी पूँछ लम्बी और हाथ-पैर पतले होते हैं। पैरों में झिल्ली होती है और पंजे नुकीले होते हैं। इनकी लम्बाई 6 इंच होती है। छोटी मछलियाँ, मेढक, केचुए तथा कीट पतंग इनके भोजन हैं। पालतू कछुए रोटी और साग भी खाते हैं। यहाँ के निवासी इनके माँस को बड़े चाव से खाते हैं। जर्मनी के लोग विशेष अवसर पर इनका भोजन करते हैं।

मि० बेरिल का कहना है कि 1924 में दो सौ स्वच्छ जल के कच्छप उत्तरी अमेरिका से लाए गए थे। उस वर्ष इंगलैंड के एक होटल में अकेलें 60 जीवों की हत्या की गयी थी और शेष को पाला गया था। अंगरेजों से अधिक अमेरिकन इनको खाना पसन्द करते हैं।

कुछ कछुए कीचड़ में भी रहते हैं। ये संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, मेक्सिको तथा मध्य अमेरिका की दलदली नदियों तथा झीलों में रहते हैं। इनके पेट की बनावट इस प्रकार की होती है कि ये हिलडुल सकते हैं। कुछ नर कछुओं के पैरों पर उठी कीलें होती हैं जिनकी रगड़ से एक प्रकार का शब्द उत्पन्न होता है। दलदल में रहने वाले कछुओं से एक प्रकार की बदबू निकला करती है। इसलिए उनके पास कोई भी थोड़ी देर तक नहीं रह सकता।

स्पेल देश में एक विचित्र प्रकार का कछुआ मिलता है। जब

उसके रहने का पानी गन्दा हो जाता है तब उसको एक प्रकार की बीमारी हो जाती है, जिसके कारण वह फूल जाता है। उसके शरीर पर चकते पड़ जाते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि उसे कुष्ट रोग हो गया है। कुछ कछुओं का शरीर अनेक प्रकार के चिह्नों से सुसज्जित रहता है और देखने में बड़ा सुन्दर प्रतीत होता है। एक प्रकार के कछुए के सिर और गर्दन पर सारंगी-रंग की धारियाँ पड़ी होती हैं और उसकी पीठ के किनारे-किनारे इसी रंग के बड़े धब्बे भी होते हैं। एक प्रकार के कछुए के सारे शरीर पर सिंदूर के रंग की धारियाँ तथा अर्ध चन्द्राकार चिह्न दिखाई देते हैं और सिर पर लाल धारियाँ पड़ी रहती हैं।

उत्तरी ब्राजील तथा गायना में पाए जाने वाले एक प्रकार वे कछुए दलदल में रहते हैं। इन कछुओं का वर्णन मि० डिटमार ने इस प्रकार से किया है···इनका सिर, गर्दन तथा शरीर इतना समतल है कि देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि मानों किसी ने इसके ऊपर कपड़े की इस्त्री चला दी है। इनके गर्दन और मुंह पर मांस के टुकड़े लटकते रहते हैं। जब ये पानी में तैरते हैं उस समय ये मांस के टुकड़े विचित्र प्रकार से फैले रहते हैं। इन फैले हुए मांस के टुकड़ों के कारण मछलियाँ आती हैं, जिनको तुरन्त खा जाते हैं।···

"स्नेक नेक्ड टिरैपिन अर्थात् साँप की गर्दनवाले टिरेपिन की गर्दन बहुत लम्बी होती है। बड़ी कड़ाई के साथ वह अपनी गर्दन

खींच सकता है । उसकी गर्दन पृष्ठ के अन्दर काफी सिकुड़ जाती है ।"

कुछ कछुए ऐसे होते हैं, जिनका सिर मगर के सिर की भाँति होता है । उनका सिर बड़ा होता है और उसमें एक मोटी तथा मजबूत चोंच लगी रहती है । उसकी पूंछ मोटी और खालों से ढकी हुई होती है और दूर से मगर की पूंछ के समान मालूम पड़ती है । इसलिए इस जाति के कछुए का नाम एलीगेटर टिरेपिन है । यह दक्षिणी कनाडा, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका तथा मेक्सिको में पाया जाता है । यह मछलियों तथा जलचर पक्षियों को पानी के अन्दर खींचकर टुकड़े-टुकड़े कर देता है । कभी-कभी तो इनका वजन 10 सेर तक भारी होता है जून जुलाई के महीने में मादा पानी को छोड़कर किसी सुरक्षित स्थान पर चली जाती है और वहाँ रेत को खोदकर अन्दर घुस जाती हैं और एक बार में 30, 40 अण्डे देती हैं । इस दशा में वह एक हफ्ते तक पड़ी रहती है । कुछ लोग इनको खाते भी हैं । वैसे इसका मांस स्वादिष्ट नहीं होता ।

स्वच्छ जल में रहने वाले कछुओं के पृष्ठ के ऊपर त्वचा की परत होती है जिसके कारण इसका पृष्ठ दिखाई नहीं देता । इसकी गर्दन लम्बी और गोल होती है । इसके पंजों में झिल्ली होती है जिसकी सहायता से वह आसानी से चल फिर सकता है । इसकी 15 जातियाँ हैं । यह उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका तथा एशिया

में पाया जाता है। इसकी सबसे बड़ी जाति गंगा नदी में मिलती है। इसकी पीठ की लम्बाई 2 फुट होती है यदि इसके मस्तिष्क को नष्ट कर दिया जाय तो भी इसके जबड़े ऊपर नीचे खुलते रहते हैं। कोई इसे तंग करता है तो मोटी आवाज में धीरे-धीरे चिल्लाता है।

अफ्रीका में इस जाति का केवल एक ही जीव मिलता है। इसका नाम नाइल ट्योनिक्स है। यह नील नदी से लेकर कांगो प्रदेश तक मिलता है। वह गंगा में मिलने वाले जीव से कुछ बड़ा होता है। एक बड़े कछुए की पीठ 3 फुट से कुछ अधिक लम्बी होती है और 15 किलो भार की होती है। अरब के निवासी बड़ी श्रद्धा से इन्हें देखते हैं। क्योंकि ऐसा कहा जाता है कि वह मगर के अंडों को खा जाता है। कभी-कभी वे लोग इसका मांस भी खाते हैं।

अमेरिका का ट्योनिक्स इन जातियों से छोटा होता है कोई भी 18 इंच से अधिक लम्बा नहीं होता है। लोग इसका मांस बड़े चाव से खाते हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के बाजारों में यह बहुत मिलता है। नीग्रो जाति के लोग काँटा डालकर इनको पकड़ते हैं। जब बहुत से कछुए पकड़ लिए जाते हैं तब इनके सिर काट देते हैं और पीठ के बीच में एक छेद कर देते हैं जिसके द्वारा इनकी सफाई कर दी जाती है। अब लोग इन समूचे कछुओं को आग में भूनकर बड़े चाव से खाते हैं।

एक प्रकार का समुद्री कछुआ होता है जिसकी चर्बी हरी होती है । अतः इसको हरा समुद्री कछुआ कहते हैं । लोग इसकी रसदार तरकारी बनाकर खाते हैं । इसे लोग बहुत पसन्द करते हैं । ये जीव शीतोष्ण कटिबन्ध के समुद्रों में बहुत मिलते हैं । एटलांटिक समुद्र के तट पर ये तैरते हुए दिखलाई पड़ते हैं जब ये सोते हुए तैरते हों तब आसानी से इन्हें पकड़ा जा सकता है । जब वे अण्डों को देने के लिए तट पर आते हैं तब मल्लाह उन्हें बाँस से उलट देते हैं और उन्हें पकड़ लेते हैं ।

मादा रेत में कई फुट गहरा गड्ढा खोदती है और उसमें अण्डे डाल देती है । अण्डे प्रायः गोल होते हैं और उनके ऊपर मुलायम चमड़े का छिलका होता है । एक छेद में 200 अण्डे डाले जा सकते हैं । कछुआ इन छेदों को ढक देता है और रेत को बराबर कर देता है जिससे यह न मालूम हो कि कहाँ पर खोदा गया है । 18 दिन से लेकर 30 दिन के बीच में बच्चे गड्ढे से निकल आते हैं और शीघ्र पानी में चले जाते हैं बहुत से बच्चों को जो पानी तक नहीं पहुँच पाते बाझ तथा अन्य चिड़िया चोंच में दवा कर खा जाती हैं अथवा पानी के निकट आते ही कुछ बड़ी मछलियाँ मुंह खोलकर चट कर जाती हैं । बड़े जीव का वजन लगभग 200 किलो होता है । इसकी पीठ साढ़े तीन फुट होती है यह भूरे रंग की होती है और इस पर पीली धारियाँ बनी होती हैं ।

होक्स बिल टर्टिल नामक एक प्रसिद्ध समुद्री कछुआ होता है। इसकी खोपड़ी बहुत कीमती होती है। इसके पृष्ठ के ऊपर पतले-पतले अनेक रंग के खाल होते हैं। कछुओं को पानी में उबाल कर मांस व त्वचा के टुकड़ों को धीरे-धीरे निकाल देते हैं। इसके पश्चात जिस प्रकार की वस्तु बनानी होती है उसी प्रकार के साँचे में उन्हें रख देते हैं। इससे अनेक प्रकार की वस्तुएँ बनाई जाती हैं।

पहले समय में लोग जीवित कछुए को आग के ऊपर उल्टा टाँग दिया करते थे। आग के लगने से पृष्ठ के खाल अलग-अलग हो जाते थे। खालों के निकलने पर इन अभागे कछुओं को पानी में छोड़ देते थे। ऐसा कहा जाता है कि फिर उनके शरीर पर खाल बन जाते थे।

लागरहेड का आकार विशेष प्रकार का होता है इसका सिर बहुत बड़ा होता है और आगे के प्रत्येक पंजे में दो नाखून होते हैं। इसकी पीठ की लम्बाई 4 फुट होती है और इसका वजन 250 किलो के बराबर होता है। लोग इसका भी मांस खाते हैं।

———

घड़ियाल

घड़ियाल से तो प्रत्येक मनुष्य परिचित हैं। इन जीवों के निकट जाने का साहस किसी को भी नहीं होता। वे भूमि पर आसानी से नहीं चल सकते अतः वे हमेशा पानी में पड़े रहते हैं और इधर-उधर तैरते हैं। उनकी नाक और आँखें सिर से ऊपर उठी हुई होती हैं जिसके कारण तैरते समय वे अपने शरीर को पानी के अन्दर रखते हैं परन्तु बराबर सांस लेते रहते हैं और चारों ओर देखते भी रहते हैं। इन जीवों के दाँत अत्यन्त भयानक होते हैं जो जबड़े के गड्ढों में लगे रहते हैं। दाँत धीरे-धीरे टूटते जाते हैं और उनके स्थान पर नए दाँत निकलते रहते हैं।

घड़ियाल तथा उसको जाति के सब जीव अण्डों से पैदा होते हैं जिनका छिलका सफेद और कड़ा होता है। अण्डों के अन्दर छोटे बच्चों की नाक के पास एक कील होती है। जिसको अण्डों का दाँत कहते हैं। इसकी सहायता से बच्चे अण्डे के छिलके को फोड़ देते हैं और बाहर निकल आते हैं। बाहर निकलने पर यह दाँत कुछ दिनों के पश्चात गिर पड़ता है।

घड़ियालों की 12 जातियाँ हैं, जो अफ्रीका, मैडागाकर, दक्षिणी एशिया, उत्तरी आस्ट्रेलिया तथा अमेरिका में पायी जाती है।

अफ्रीका की नील नदी के घड़ियाल को प्राचीन मिश्र के निवासी श्रृद्धा की दृष्टि से देखते थे। कुछ शहरों में वे उन्हें पाला भी करते थे। उनके कान और आगे के पैरों में सोने की बालियाँ और बहुमूल्य आभूषण पहनाते थे। मृत्यु के पश्चात उनके शव को सुगन्धित वस्तुओं से ढका जाता था और उनको मकबरे में गाड़ा जाता था। उस स्थान पर कब्र भी बनवा दी जाती थी। मिश्र के लोग उनकी बड़ी देखभाल करते रहते थे। हिरोडोटस का कहना है कि घड़ियाल को खाने के लिए भुना हुआ माँस, रोटी का टुकड़ा और शराब का एक प्याला दिया करते थे।

नील नदी का घड़ियाल मनुष्य भक्षक होता था। अतः वहाँ पर रहने वाले मनुष्य अत्यन्त भयभीत रहते थे। जहाँ घड़ियाल होता था, लोग डर के मारे उस स्थान को छोड़ कर चले जाते थे। एक समय की बात है कि एक घड़ियाल ने घोड़े पर चढ़े हुए आदमी को खींच लिया था और मार डाला था। एक बार एक घड़ियाल के पेट से 25 सेर सोना निकला था। जिससे यह मालूम होता है कि ये घड़ियाल मनुष्य को खाया करते थे। एक और घड़ियाल के पेट से हाथ की चूड़ियाँ, तीन बड़े सोने के बाजूबन्द, गले का हार, एक डोरी, हाथ और पैर की 14 हड्डियाँ और तीन स्तनपायी जीवों की रीढ़ की हड्डियाँ निकली थीं। ये वस्तुएं 1923 के मार्च में लन्दन की पशुशाला में प्रदर्शित की गयीं थी।

घड़ियाल की खाल बहुत काम की होती है। प्राचीन

मिश्र के निवासी इस खाल से अपने अस्त्रशास्त्र बनाते थे। लोग तो इसके मांस को भी खाते हैं। मि० मेडन लिखते हैं कि इस जीव का माँस केकड़े के माँस के सदृश्य होता है और इसका स्वाद भी उसी जीव के समान होता है। इसके विपरीत कुछ लोगों की राय है कि इसका माँस स्टर्जन मछली के माँस की तरह होता है। कैसा भी स्वाद हो इस जीव का माँस बहुत कम मनुष्य खाते हैं।



चित्र 1—भारतीय घड़ियाल

नील घड़ियाल की लम्बाई 18 फुट होती है। यह दिन के समय रेत में लेटने के लिए जल से बाहर निकल आता है और मुँह खोलकर पड़ा रहता है। इसके मुँह पर छोटी-छोटी चिड़ियाँ आकर बैठतीं है और इसके मुँह पर रेंगने वाले कीट पतंगों को

बड़े चाव से खाती हैं। किन्तु घड़ियाल बड़े आराम के साथ लेटा रहता है।

बसन्त ऋतु में मादा रेत में एक गड्ढा बना लेती है और इसमें 40 से लेकर 60 अण्डे डालती है। इसके पश्चात उस गड्ढे को ढक देती है। कभी-कभी यह देखा गया है कि मादा उसी स्थान पर बैठी रहती है। बच्चे 4 से 6 हफ्तों के बाद अण्डों से निकलते हैं। मादा खोदकर बच्चे को बाहर निकाल लेती है। गड्ढे से निकल कर बच्चे तुरन्त पानी में चले जाते हैं। आदमी को खाने वाले घड़ियाल भारतवर्ष से लेकर आस्ट्रेलिया तक में पाए जाते हैं। इसकी लम्बाई 20 फुट तक होती है। प्रथम प्रकार के घड़ियाल से यह अधिक भयानक होता है। अण्डे देने के समय यह इतनी भयानक हो जाती है कि छोटी-छोटी नावों पर धावा बोल देती है। और उन पर बैठे हुए आदमियों को खा जाती है। उसे पकड़ने के लिए बहुत सी विधियाँ सोची गयी हैं और प्रयोग में लायी गयी हैं। मि० लेडीकर एक ऐसी विधि का वर्णन करते हैं···एक शिकारी अपने लड़के के साथ एक नाव पर बैठकर उस स्थान पर गया जहाँ घड़ियाल ने एक मनुष्य की हत्या की थी। थोड़ी देर के बाद उसने घड़ियाल को देखा जो पानी पर तैर रहा था। लड़का तुरन्त पानी में कूदकर हाथों से थप-थपाने लगा। जिससे कि मनुष्य भक्षक घड़ियाल उसके पास आ जाय। परन्तु उसने तेजी से डुबकी लगायी और ठीक उसी स्थान पर आ पहुँचा जहाँ लड़का खड़ा था। इसी बीच में लड़का नाव

पर चढ़ आया। घड़ियाल के आते ही उसके ऊपर भाला मारा गया और वह वहीं मर कर उतारने लगा।

घड़ियाल दलदलों में रहते हैं जो भारतवर्ष तथा लंका की नदियों और झीलों में पाए जाते हैं। कभी-कभी वे मलाया के प्रदेशों में भी मिलते हैं। यह घड़ियाल 12 फुट से अधिक लम्बा नहीं होता है परन्तु होता बहुत डरपोक है। यह घड़ियाल बहुत जल्द पालतू हो जाते हैं और मनुष्य के हाथों से खाना भी खाने लगते हैं। गर्मी के दिनों में जब पानी सूख जाता है तब ये भूमि पर चलकर नये तालाब और नदियों की खोज करते फिरते हैं। कभी वे सूखती हुई नदियों या तालाबों के दलदल में अन्दर तक चले जाते हैं और बरसात के दिनों में बाहर निकल आते हैं।

गंगा, सिंध तथा ब्रह्मपुत्र नदियों में अत्यन्त विशाल घड़ियाल पाये जाते हैं। इनकी लम्बाई 30 फुट से अधिक होती है। इनका मुंह लम्बा होता है और मुंह की नोक पर एक थूथन सी होती है। जो घड़ियाल मछलियाँ खाते हैं वे मनुष्य पर आक्रमण नहीं करते। कभी-कभी घड़ियाल के पेट में मनुष्य की हड्डियाँ भी मिलती हैं। जिससे यह प्रकट होता है कि ये मनुष्य को भी खा जाते हैं। मादा घड़ियाल 40 अण्डे देती है और उन्हें रेत में किसी गड्ढे में रख देती है।

घड़ियाल की दो जातियाँ होती हैं। एक जाति दक्षिणी-पश्चिमी संयुक्त प्रदेश में पायी जाती है और दूसरी चीन की

यांगटिसीक्यांग नदी में मिलती है। विद्वान स्विन-हो ने पहली बार 1870 ई० में जीव विज्ञान वेत्ताओं के सामने इस चीनी घड़ियाल का प्रदर्शन किया था। अमेरिका के घड़ियाल अब भी

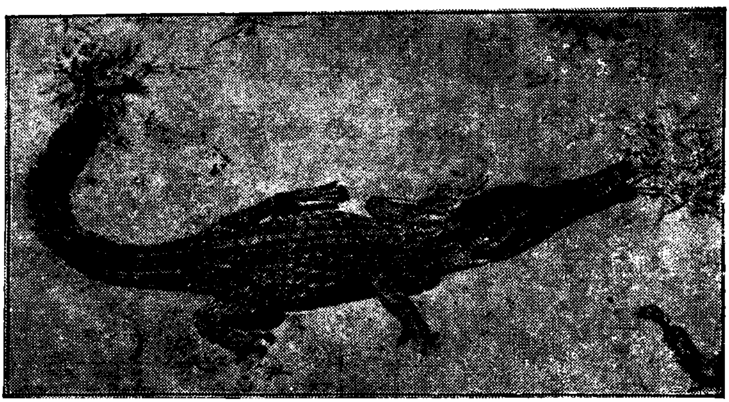


चित्र 2—अमरीकन मगर और घड़ियाल

कुछ प्रान्तों में बहुतायत से मिलते हैं। परन्तु कुछ प्रान्तों में शिकार के कारण उनका अभाव हो गया है। उनके चमड़े के लिए उनका शिकार किया जाता है। उनकी खाल से अनेक प्रकार की वस्तुएँ जैसे सूटकेश, बक्स आदि बनाए जाते हैं। एक समय केवल न्यू आर्लियन्स के शहर से 10000 घड़ियालों की खाल बाहर भेजी गयी थी। इसकी लम्बाई 15 फुट होती है।

न्यूयार्क की पशुशाला में एक बार एक घड़ियाल का बच्चा

लाया गया था। उसकी लम्बाई उस समय 8 इंच थी और वजन 1½ पाव था। पहले वर्ष वह तीस इंच लम्बा हो गया और 1½ किलों के करीब भारी दूसरे वर्ष 3 फुट 9 इंच लम्बा हो गया और 7 किलो भारी हो गया। तीसरे वर्ष उसकी लम्बाई 6 फुट हो गयी और उसका वजन 30 किलो तक हो गया। इस प्रकार 4 वर्ष के पश्चात वह 9 फुट 3 इंच लम्बा और 90 किलो भारी हो गया। अमरीकन घड़ियाल भी बसन्तु ऋतु में 30 से 40 तक अण्डे देते हैं। मादा उनको घास-पत्तियों से बने हुए घोंसले में रख देती है और चारों ओर से उसे सड़ी हुई पत्तियों से और टहनियों से ढक देती है। इस प्रकार का घोंसला काफी गरम रहता है। दो महीने के बाद बच्चे इन अण्डों से निकल आते हैं।



चित्र 3—नील नदी का घड़ियाल

चीनी घड़ियाल केवल 7 फुट लम्बा होता है। अमरीकन घड़ियाल से यह बहुत भिन्न होता है। दक्षिणी और मध्य अमेरिका

में भी कुछ घड़ियाल पाए जाते हैं। परन्तु ये ऊपर की जातियों से बहुत भिन्न हैं। इन जातियों में काला घड़ियाल विशाल आकार का होता है जिसकी लम्बाई 20 फुट होती है। मि० वेट ने अमेरिकन नदी के किनारे घूमते-घूमते देखा कि दो घड़ियाल चुप-चाप घाट के किनारे लेटे हुए चारों ओर देख रहे हैं कि कोई कुत्ता, भेड़, सूअर, बच्चा या आदमी उनके पास आए और वे तुरन्त पानी में घसीटकर उसे मार डालें। लोग भी बड़ी सावधानी से नहाते थे। उनकी दृष्टि सदैव उनकी घूरती हुई आँखों पर थी। केवल इस जीव का सिर और आँखें पानी के ऊपर निकली रहती थीं। आश्चर्य की बात है कि इसी वर्ग के एक प्रकार के घड़ियाल कि आँखों के चारों ओर चश्में के चिह्न बने रहते हैं जिनके कारण इसका नाम चश्मेदार घड़ियाल पड़ गया है। परन्तु इसकी लम्बाई बहुत कम होती है। यह केवल आठ फुट लम्बा होता है।
